"Knowledge Scholar"
An International Peer Reviewed E-Journal Of Multidisciplinary Research
Volume: 09, Issue: 03, May – June 2022 eISSN NO. 2394-5362
Impact Factor (SJIF) – 6.323

कालिदास की कृतियों में समन्वयवादी चिन्तन

(कल्पना एवं यथार्थ में समन्वय)

डॉ. रजनीश कुमार बारहठ
सहायक आचार्य (संस्कृत)
एस.के. राजकीय कन्या महाविद्यालय,
सीकर, राजस्थान, भारत

शोध सारांश

कल्पना कवि की पहचान होती है। वस्तुतः कल्पना के बिना काव्य–संसार की सृष्टि नहीं हो सकती है। कल्पना का आश्रय लेकर ही कवि अपनी विषय वस्तु को विस्तृत, अलंकृत, रसयुक्त व काव्यमयी बनाता है। इस प्रकार कल्पना काव्य का अत्यावश्यक तत्त्व होता है एवं प्रत्येक कवि अपने काव्य में कल्पना तत्त्व का प्रयोग करता ही है। तथापि एक श्रेष्ठ कवि के लिए यह आवश्यक है कि उसके काव्य में कल्पना तत्त्व का इतना अतिरेक न हो कि वह यथार्थ पृष्ठभूमि को स्पर्श ही न करे। एक अच्छे काव्य के लिए यह आवश्यक है कि वह मानव जीवन की वास्तविकताओं से सम्बद्ध हो एवं समाज व मानव संवेदनाओं का यथार्थ चित्रण उसमें प्रस्तुत हो। केवल कल्पना की उड़ान में उड़कर ऐसी रचना लिख देना आदर्श काव्य नहीं है जो यथार्थ के धरातल से बहुत दूर हो एवं मानव जीवन व समाज का उनसे कोई तारतम्य ही न हो। अतः स्पष्ट है कि काव्य के उत्कर्ष के लिए कल्पना एवं यथार्थ दोनों का समन्वय आवश्यक है।

कालिदास के काव्यों का अवलोकन करने से यह स्पष्ट होता है कि कवि ने अपनी कृतियों में कल्पना एवं यथार्थ दोनों ही तत्त्वों को समाविष्ट किया है। कविकुलगुरू ने अपनी रचनाओं में जहाँ एक ओर मनुष्य, समाज, प्रकृति एवं मानवजीवन के विविध पक्षों को विषयवस्तु के रूप में ग्रहण किया है, वहीं दूसरी ओर उनको रसमयी व आकर्षक बनाने के लिए कल्पना का समुचित संपुट भी दिया है। कवि की सभी कृतियों में मनुष्य, समाज, प्रकृति और मानव संवेदनाओं को यथार्थ रूप में चित्रित किया है साथ ही विभिन्न अलंकारों से सुशोभित भी किया है। कालिदास के इस समन्वय को हम यहाँ विविध दृष्टांतों व संदर्भों से स्पष्ट करेंगे।

संकेताक्षर –

1. कल्पना तत्त्व, अभिज्ञानशाकुन्तलम्, मेघदूत, प्रकृतिचित्रण, यथार्थ, स्त्री सौन्दर्य, शृंगार, वास्तविकता, काव्य।

कल्पना एवं यथार्थ में समन्वय

अभिज्ञानशाकुन्तलम् में कल्पना एवं यथार्थ में समन्वय

कालिदास के विश्व प्रसिद्ध नाटक अभिज्ञानशाकुन्तलम् में कल्पना व यथार्थ का सुंदर समन्वय दर्शनीय है। शकुन्तला व दुष्यन्त की प्रणय कथा को आधार बनाकर कवि ने मनुष्य–जीवन के विभिन्न आयामों एवं मनोभावों के वास्तविक वर्णन को कल्पना तत्त्व के साथ बड़े ही सुंदर रूप में उकेरा है। इस नाटक में उक्त समन्वय सर्वत्र है।

यथा–

प्रथम अंक में ही कण्व के आश्रम का जो सजीव वर्णन किया है वह वास्तव में यथार्थ एवं श्लाघनीय है–

नीवाराः शुकगर्भकोटरमुखभ्रष्टास्तरूणामधः।
प्रस्निग्धाः क्वचिदिंगुदीकलभिदः सूच्यन्त एवोपलाः।
विश्वासोपगमादभिन्नगतयः शब्दं सहन्ते मृगा–
स्तोयाधारपथाश्च वल्कलशिखानिष्यन्दरेखांकिताः।।[1]

आगे जब दुष्यन्त शकुन्तला को आश्रम में प्रथम बार देखता है एवं कवि द्वारा उसका जो वर्णन प्रस्तुत किया गया है उसमें उसके सौंदर्य के अतिशय का यथार्थ है किन्तु साथ ही जिन उपमानों का प्रयोग किया है वह कवि की कल्पना–निपुणता के द्योतक हैं–

सरसिजमनुविद्धं शैवलेनापि रम्यं
मलिनमपि हिमांशोर्लक्ष्म लक्ष्मीं तनोति।
इयमधिकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी
किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम्।।[2]
अधरः किसलयपरागः कोमलविटपानुकारिणौ बाहू।
कुसुममिव लोभनीयं यौवनमंगेषु सन्नद्धम्।।[3]

कवि ने शकुन्तला के सौन्दर्य वर्णन में अनेकों कल्पनाएँ की हैं।

[1] अभिज्ञानशाकुन्तलम् 1/13
[2] अभिज्ञानशाकुन्तलम् 1/17
[3] अभिज्ञानशाकुन्तलम् 1/18

इसी प्रकार प्रथम अंक के प्रारम्भ में हरिण के पीछे दौड़ते हुए घोड़ों का जो वर्णन किया गया वह वास्तव में ही यथार्थ है। लेकिन उनके दौड़ने के पीछे कवि ने जिस कारण की उत्प्रेक्षा की है वह सुन्दर कल्पना है–

मुक्तेषु रश्मिषु निरायतपूर्वकाया निष्कम्पचामरशिखा निभृतोर्ध्वकर्णाः।
आत्मोद्धतैरपि रजोभिरलंघनीयाधावन्त्यमयी मृगजवाक्षयमेव रथ्याः।।[4]

शाकुन्तलम् के प्रथम अंक के अंत में दुष्यंत व शकुन्तला की परस्पर आसक्ति एवं इसी प्रकार, तृतीय सर्ग में दोनों का परस्पर प्रणयराग युवावस्था में स्वाभाविक है। इस अवस्था में स्त्री–पुरुष का अनुराग मनोवैज्ञानिक सत्य है।

इसी तरह द्वितीय अंक के दूसरे पद्य में कामी व्यक्ति की यथार्थ स्थिति का वर्णन किया गया है–

स्निग्धं वीक्षितमन्यतोऽपि..... कामी स्वतां पश्यति।[5]

अर्थात् यह यथार्थ है कि कामातिरेक की अवस्था में व्यक्ति नायिका द्वारा की गयी चेष्टाओं को स्वयं के लिए ही समझने लगता है।

नाटक के तृतीय अंक में दुष्यन्त व शकुन्तला का प्रणय हो जाता है जिससे यह ज्ञात होता है कि तत्कालीन समय में माता–पिता की आज्ञा के बिना परस्पर अनुरक्तिवशाद् गान्धर्व विवाह प्रचलित थे। इस प्रकार कवि ने समाज में प्रचलित प्रथाओं का भी यथार्थ वर्णन किया है।

तृतीय अंक के बाद चतुर्थ अंक में जब दुर्वासा ऋषि शकुन्तला का आह्वान करता है किन्तु दुष्यंत के चिन्तन में रत वह उन्हें नहीं सुनती है। अत्यासक्ति में ऐसा होना मनोवैज्ञानिक यथार्थ है–

विचिन्तयन्तीयमनन्यमानसा..... कथां प्रमतः प्रथमं कृतामिव।[6]

दुर्वासा के शापवशाद् दुष्यन्त शकुन्तला को भूल जाता है और जब शकुन्तला के परिजन उसे दुष्यंत के पास लेकर जाते हैं तो दुष्यन्त उसे अपनाने से मना कर देता

[4] अभिज्ञानशाकुन्तलम् 1/8
[5] अभिज्ञानशाकुन्तलम् 2/2
[6] अभिज्ञानशाकुन्तलम् 4/1

है। यह वर्णन तत्कालीन सामाजिक उत्कर्ष के यथार्थ को प्रकट करता है कि उस समय समाज में लोकलाज व प्रतिष्ठा थी।[7]

पंचम अंक में शकुन्तला–दुष्यन्त–शार्ङ्गव आदि के संवादों से भी ज्ञात होता है कि उस समय स्त्रियों के कर्तव्य एवं अधिकार कैसे थे।[8]

पंचम अंक में कण्वशिष्य दुष्यन्त से शकुन्तला को अपनाने को कहते हैं, किन्तु जब राजा उसे स्वीकार नहीं करता तो वे शकुन्तला को ही कोसते हैं। इसी बीच एक तेजपुंज आता है और वह शकुन्तला को उठा ले जाता है। यहाँ कवि अचानक काव्य को मोड़ देने के लिए कल्पना का आश्रय ले लेते हैं। वहीं तत्कालीन समाज का यथार्थ चित्रण दृष्टिगत होता है।

आगे सप्तम अंक में सर्वदमन वर्णन में कवि ने सर्वदमन द्वारा सिंह शावक के साथ खेलने का जो रोचक वर्णन किया है वह कल्पना तत्त्व से ओतप्रोत है किन्तु उसका बाल्यवर्णन दुष्यन्त की उसके प्रति वात्सल्यता सजीव एवं यथार्थ है–

अर्धपीतस्तनं मातुरामर्दक्लिष्टकेसरम्।
प्रक्रीडितुं सिंह शिशुं बलात्कारेण कर्षति।।[9]
प्रलोभ्यवस्तुप्रणयप्रसारिता..... भिन्नभिवैकपंकजम्।।[10]
अनेन कस्यापि कुलांकुरेण..... कृतिनः प्ररुढः।।[11]

इसी प्रकार नाटक के छठे अंक में राजा के कर्तव्य–वर्णन में जो पद्य है उससे यह ज्ञात होता है कि उस समय राजा छठा अंश भूमि–कर के रूप में लेता था जो तत्कालीन भू–राजस्व व्यवस्था को स्पष्ट करता है साथ ही ये पद्य यह भी स्पष्ट करते हैं कि तत्कालीन राजा प्रजावत्सल थे।[12]

---

[7] नापेक्षितो गुरूजनोऽनया..... किमेकेकय।। अभिज्ञानशाकुन्तलम् 5/16
सतीमपि ज्ञातिकुलैकसंश्रया.....।। अभिज्ञानशाकुन्तलम् 5/17

[8] यदि यया वदति क्षितिषस्तथा त्वमसि किं पितरूत्कुलया त्वया।
अथ तु वेत्सि शुचि वृतमात्मनः पतिकुले तव दास्यमपि क्षममा।। अभिज्ञानशाकुन्तलम् 5/27

[9] अभिज्ञानशाकुन्तलम् 7/14

[10] अभिज्ञानशाकुन्तलम् 7/16

[11] अभिज्ञानशाकुन्तलम् 7/19

[12] देखें पद्य संख्या 4–7 व 12, पंचम अंक, अभिज्ञानशाकुन्तलम्

कल्पना की बात करें तो कवि ने शकुन्तला के सौन्दर्य वर्णन में जो उपमाएँ व उत्प्रेक्षाएँ की है, वे सब कवि की कल्पना शक्ति को उजागर की है। प्रकृति का मानवीकरण भी नाटक में बहुत्र है जो कल्पना का ही विस्तार है।

इस विवरण से स्पष्ट है कि कवि ने अपने ख्यातिप्राप्त नाटक अभिज्ञानशाकुन्तलम् में कल्पना व यथार्थ दोनों तत्त्वों को शामिल किया है।

मेघदूत में कल्पना एवं यथार्थ में समन्वय

मेघदूत में कल्पना व यथार्थ तत्त्व में समन्वय कवि का मेघदूत गीतिकाव्य जगत में विशिष्ट पहचान रखना है। गीतिकाव्य के लिये यह आवश्यक है कि उसमें भाव–प्रधानता, रस प्रधानता कल्पना प्रधानता एवं गेयात्मकता होनी चाहिए। अतः काव्य की इस विधा से ही पूर्व स्पष्ट है कि इस रचना में कवि ने कल्पनाशक्ति का श्रेष्ठतम प्रयोग किया है। एक यक्ष और यक्षिणी की प्रेमकथा को आधार बनाकर कवि ने कल्पनाओं का सुंदर चित्र इस कृति के रूप में उकेरा है। तथापि इसमें यथार्थ वर्णन भी दृष्टिगत होता है। सर्वप्रथम तो प्रेमी के वियोग की असह्यनीयता यथार्थ होती है क्योंकि प्रेम मानव–भावों की पराकाष्ठा है और उस प्रेमी या प्रेयसी के वियोग में कवि ने जो वर्णन प्रस्तुत किया है वह वास्तव में स्वाभाविक व यथार्थ है।

इसी प्रकार कवि ने प्रकृति–चित्रण में कल्पनाओं का भरपूर सहारा लिया है तथापि कवि द्वारा वर्णित नदियाँ, पर्वत, मंदिर, नगरी आदि वास्तविक स्थल हैं जो आज भी विद्यमान हैं।[13]

इसी प्रकार सम्पूर्ण मेघदूत में कल्पना की सुंदरता के साथ–साथ तत्कालीन समाज, समृद्धि, जीवनशैली व भौगोलिक स्थिति का यथार्थ चित्र दिखाया गया है। यहाँ पर इसका सोदाहरण विवेचन किया जा रहा है–

सर्वप्रथम तो मेघदूत की विषयवस्तु प्रायः प्रामाणिक व ऐतिहासिक न होकर कल्पना प्रधान हैं। कवि ने यक्ष व यक्षिणी की प्रणय–कथा की कल्पना कर कथावस्तु का विस्तार किया है। तदुपरान्त एक मेघ को दूत बनाना व उसके द्वारा सन्देश को ले जाने की घटना को स्वयं कवि ने कल्पनाप्रधान माना है लेकिन साथ ही वियोग से

[13] कालिदास की कृतियों में भौगोलिक स्थलों का प्रत्यभिज्ञान, डॉ0 के0एन0 द्विवेदी

पीड़ित काम–व्याकुल यक्ष की मनोस्थिति का यथार्थ वर्णन किया है। भले ही मेघ संदेश को ले जाने में असमर्थ हों किन्तु काम–पीड़ित व्यक्ति जड़ और चेतन के भेद को भूल जाता है। इस प्रकार यहाँ कल्पना व यथार्थ का अतीव रमणीय समन्वय है–

धूमज्योतिः सलिलमरुतां सन्निपातः क्व मेघः।
सन्देशार्थाः क्व पटुकरणैः प्राणिभिः प्रापणीयाः।
इत्यौत्सुक्यादपरिगणयन् गुह्यकस्तं ययाचे
कामार्ता हि प्रकृति कृपणाश्चेतनाऽचेतनेषु।।[14]

मेघदूत में अन्यत्र भी बहुत से पद्यों में कल्पना व यथार्थ का संगम है। गीतिकाव्य के विविध पद्यों में प्राकृतिक उपादानों में नायक–नायिका भाव की कल्पना की गयी है। किन्तु जहाँ एक ओर उनका मानवीकरण करके श्रृंगार की वास्तविकताओं को प्रकट किया है, वहीं दूसरी ओर उन प्राकृतिक उपादानों (नदियाँ, पर्वत, मन्दिर नगरी इत्यादि)[15] की वास्तविक, भौगोलिक स्थिति को भी इंगित किया है जो आज भी वहीं विद्यमान हैं।

मेघ को दूत के रूप में मानना, निर्विन्ध्या, नर्मदा व गम्भीरा आदि नदियों को नायिका के रूप में मानना तथा मेघ को उनके नायक के रूप में बताना, उसी प्रकार आम्रकूट पर्वत को पृथ्वी रूपी नायिका के स्तन के रूप में प्रकट करना कवि कल्पनाशक्ति को पुष्ट करते हैं।

छन्नोपान्तः परिणितफलद्योतिभिः काननाम्रै–
स्त्वयारूढे शिखिरमचलः स्निग्धवेणीसवर्णे।
नूनं पास्यत्यमरमिथुनप्रेक्षणीयामवस्थां
मध्ये श्यामः स्तन इव भुवः शेषविस्तारपाण्डुः।।[16]

इस पद्य में कालिदास की कल्पना द्रष्टव्य है। यहाँ पर पके हुए आम के फलों से पीली आभा वाले आम्रकूट पर्वत को पृथ्वीरूपी नायिका का स्तन माना गया है और जब उसके ऊपर कृष्णवर्णीय मेघ आएगा तो वह उस स्तन के स्तनाग्र (चंचुक) के रूप में

[14] मेघदूत पूर्वमेघ 1/5
[15] कालिदास की कृतियों में भौगोलिक स्थिति का प्रत्यभिज्ञान, डॉ0 के0एन0 द्विवेदी
[16] मेघदूत, पूर्वमेघ 1/18

शोभा प्राप्त करेगा तथा देवगण इस जोड़ी को प्रसन्नता से देखेंगें। यहाँ मेघ के मार्ग में जिस आम्रकूट पर्वत का वर्णन किया है, वह वास्तव में वहाँ मौजूद है किन्तु भावों की कल्पना रमणीय है इसी प्रकार–

तस्यातिक्तैर्वनगजमदेर्वासितं वांत्तवृष्टि
र्जम्बूकुंजप्रतिहतरयं तोयमादय गच्छेः।
अन्तःसारं घन! तुलयितुं नानिलःशक्ष्यति त्वां
रिक्तः सर्वो भवति हि लघुः पूर्णता गौरवाय।।[17]

यहाँ पर नर्मदा नदी में नायिकात्व भाव एवं मेघ में नायकत्व भाव की कल्पना करना कवि की कल्पना–प्रधानता है, वहीं पद्य के अन्त में जो सूक्ति कही गयी है, वह वास्तव में सत्य है। दूसरा यथार्थ यह भी है कि कवि ने जिस नदी को नायिका माना है वह कल्पित मात्र न होकर यथार्थ है, जो आज भी उस स्थान पर बहती है। अतः कवि ने कल्पना व यथार्थ दोनों को ही स्पर्श किया है। एवमेव–

वीचिक्षोभस्तनितविहगश्रेणिकांचीगुणायाः,
संसर्पन्त्या स्खलितसुभगं दर्शितावर्तनाभेः।
निर्विन्ध्यायाः पथि भव रसाभ्यन्तरः सन्निपत्य
स्त्रीणामाधं प्रणयवचनं विभ्रमो हि प्रियेषु।।[18]

कवि ने काम विज्ञान के छोटे–छोटे मनोवैज्ञानिक तथ्यों को छुआ है। यह वास्तविकता है कि स्त्री चाहे कितनी ही काम–व्याकुल हो लेकिन वह स्पष्ट रूप से अपने नायक को संयोग के लिए नहीं कहेगी प्रत्युत नायक को ही उसके हाव–भाव, विभ्रम व चेष्टाओं से समझ जाना चाहिए। इस तथ्य को कवि ने निर्विन्ध्या को नायिका रूप में प्रस्तुत कर मेघरूपी नायक को समझाया है। नदी पर उड़े हुए शब्दायमान पक्षीपंक्ति को कवि ने निर्विन्ध्या भंवर में नाभि की कल्पना की है एवं इधर–उधर बहने को यौवनमद से लड़खड़ाना माना है।

तस्याः किंचित् करधृतमिव प्राप्तवावीरशाखं
ह्रत्वा नीलं सलिलवसनं मुक्तरोधोनितम्बम्।

[17] मेघदूत, पूर्वमेघ 1/20
[18] मेघदूत, पूर्वमेघ 1/29

प्रस्थानं ते कथमपि सखे लम्बमानस्य भावि
ज्ञातास्वादो विवृतजघनां को विहातुं समर्थः।।[19]

इस पद्य में भी कविकुलगुरू ने उत्प्रेक्षा रूपक व अर्थान्तरन्यास के समन्वय के साथ कल्पना व वास्तविकता को जोड़ा है। कवि ने गम्भीरा को नायिका रूप में बताकर कामवेग के अतिशय की वास्तविकता स्पष्ट की है। गम्भीरा को नायिका मानना गम्भीरा के तट को नायिका का नितम्ब मानना, नीले जल को वस्त्र मानना, बेत की शाखा को नायिका का हाथ मानना व मेघ को उसके विवृत शरीर को देखने वाला नायक मानना कल्पना ही है, किन्तु यह वास्तविकता है कि कामावेग में विवृतजघना नायिका को समक्ष एवं अनुकूल देखकर उसको छोड़ पाना सामान्य मनुष्य के बस की बात नहीं है। कवि ने कल्पना की है कि जैसे कोई कामात अपनी नवपरणिता के नितम्ब से वस्त्र हटाता है किन्तु वह अपने हाथ से उसे रोकती है, उसी प्रकार मेघ अपनी गम्भीरा रूपी प्रियतमा के तटरूपी नितम्ब से वस्त्र हटा रहा है जिसे गम्भीरा बेंत की शाखारूपी हाथ से रोक रही है। इस प्रकार कविता कामिनी विलास कालिदास ने अपने इस गीतिकाव्य में एक प्रणय कथा को कल्पना व यथार्थ के अद्भुत समन्वय के साथ प्रस्तुत कर काव्य जगत् को एक अनुपम भेंट की है।

रघुवंश में कल्पना व यथार्थ में समन्वय

कालिदास ने अपने महाकाव्य रघुवंश में भी कल्पना व यथार्थ में सुंदर समन्वय किया है। कवि ने बहुत्र अपनी उपमाओं के माध्यम से यथार्थ को कल्पनाओं से जोड़ा है। स्त्री सौन्दर्य, मनुष्य पराक्रम व मानव–संवेदनाओं का विविध प्राकृतिक–उपादानों से मानवीकरण सम्बन्ध करके कवि ने अपनी प्रतिभा को सिद्ध किया है।

यथा–

संचारिणी दीपशिखेव रात्रौ यं यं व्यतीयाय पतिंवरा सा।
नरेन्द्रमार्गाट्ट इव प्रपेदे विवर्णभावं स स भूमिपालः।।[20]

[19] मेघदूत, पूर्वमेघ 1/45
[20] रघुवंश 6/67

यह पद्य इन्दुमती स्वयंवर के प्रसंग का है। जब इन्दुमती वरमाला लेकर राजमार्ग पर बढ़ती है तब पहले तो राजाओं के मुख पर आशा रहती है किन्तु वह जैसे ही आगे चली जाती है तो पिछे रह गये राजा विवर्ण भाव (उदासी) को प्राप्त हो जाते हैं। यहाँ कवि ने कल्पना की है जिस प्रकार कोई दीपशिखा जब भवनों के पास से गुजरती है तब तो उन भवनों पर उसके प्रकाश की दीप्ति रहती है, किन्तु ज्यों ज्यों वह आगे बढ़ती जाती है त्यों त्यों वे भवन ओझल से होने लगते हैं और प्रकाशरहित हो जाते हैं। यहाँ कवि ने अतीव सुंदर कल्पना (उपमा) का प्रयोग किया है। इसीलिए कवि को स्वयं को भी दीपशिखा कालिदास कहा जाने लगा। इन्दुमती का सौंदर्य इतना प्रशस्त था कि कवि ने उसे दीपशिखा नाम से अभिहित किया है और जैसे–जैसे वह दीपशिखा तुल्य इन्दुमती राजाओं को नकारती गई तो उनके मुख पर म्लानता आना स्वाभाविक है। इस प्रकार कवि ने रघुवंश में बहुत्र ऐसे प्रयोग किये हैं–

पुरस्कृता वर्त्मनि पार्श्विवेन दिनक्षपामध्यगतेव संध्या।।[21]

यहाँ पर दिलीप व सुदक्षिणा द्वारा नन्दिनी गौ सेवा को बड़े ही सुंदर ढंग से उकेरा है।

इस प्रकार कवि ने अपने रघुवंश महाकाव्य में कल्पना तत्त्व व यथार्थ तत्त्व को समाविष्ट बहुत ही सुंदर ढंग से किया है। कवि के इस महाकाव्य का अंगी रस शान्त है जो जीवन की हकीकत व अन्तिम सत्य को उजागर करता है।

कालिदास ने अपनी इस रचना में विभिन्न राजाओं व जीवन के विविध पक्षों का वर्णन करते हुए संसार की निस्सारता को प्रकट किया है, जो उसके दार्शनिक यथार्थ चिंतन को पुष्ट करता है। कवि ने परोक्ष रूप से यह प्रतिपादित किया है कि यह जीवन नश्वर है, जो दार्शनिक यथार्थ है।

विक्रमोर्वशीयम् व मालविकाग्निमित्र नाटक में कल्पना एवं यथार्थ में समन्वय

कवि ने विक्रमोर्वशीयम् व मालविकाग्निमित्रम् रूपकों में भी कल्पना व यथार्थ का समन्वय दर्शाया है। विक्रमोर्वशीयम् त्रोटक में पुरुरवा व उर्वशी नामक अप्सरा की प्रणय कथा है। पुरुरवा एक राजा है एवं उर्वशी एक दैवीय नायिका है। पुरुरवा उर्वशी को

[21] रघुवंश 2/20

केशी नामक दैत्य से छुड़ाता है। दोनों एक दूसरे से आकृष्ट हो जाते हैं। इस प्रकार एक दैवीय नायिका व मनुष्य का प्रसंग यथार्थ जीवन में घटित नहीं हो सकता। इसी प्रकार उर्वशी का सौंदर्य वर्णन किया गया है वह भी कवि की भावुकता व कल्पना को ही पुष्ट करता है–

अस्याः सर्गाविधौ प्रजापतिरभूच्चन्द्रो नु कान्तिप्रदः
शृंगारैकरसः स्वयं नु मदनो मासो नु पुष्पाकरः।
वेदाभ्यास जड़ः कथं नु विषय व्यावृत कौतुहलौ
निर्मार्तुं प्रभवेन्मनोहरमिदं रूपं पुराणो मुनिः।।[22]

यहाँ उर्वशी की सृष्टि में चन्द्रमा, मदन व वसन्त आदि को हेतु बताना कल्पनातिरेक ही है।

इसी प्रकार मालविकाग्निमित्रम् नाटक में भी कल्पनाप्रवाह है। किन्तु इन सब कल्पनाओं के साथ मानव स्वभाव की वास्तविकताओं को कवि ने प्रकट किया है। स्त्री–सौंदर्य या प्रकृति–सौंदर्य चित्रण में कवि ने भले ही विविध कल्पनाएँ व उपमा–प्रयोग किये हो। किन्तु यह वास्तविकता कि ये दोनों ही विषय सौंदर्य का अधिकरण है। अतः इसे केवल कल्पना प्रवाह नहीं कह सकते बल्कि कल्पना व यथार्थ का सम्मिलित समय प्रवाह कहना समुचित होगा। इसी प्रकार हम ऐतिहासिकता को देखें तो इस नाटक में शुंगवंशीय राजाओं का वर्णन किया है जिनमें पुष्यमित्र शुंग प्रमुख था, इसी के साथ विदर्भ का जो वर्णन है वह भी तत्कालीन राजक्षेत्र था। नाटक में वर्णित विषयवस्तु से तत्कालीन समाज की आर्थिक व सांस्कृतिक स्थिति का पता चलता है। साथ ही शिक्षकों के विषय में भी कुछ पद्य है जिनसे पता चलता है उस समय पुरातन काल की अपेक्षा आचार्य की गरिमा में थोड़ी गिरावट आ चुकी थी, अब शिक्षक वणिकवृत्ति की तरफ प्रवृत्त होने लगे थे। एवंविध ऋतुसंहार गीतिकाव्य में भी जो ऋतुओं का वर्णन है वह एक ओर सजीव व वास्तविक है वहीं दूसरी ओर उनको उद्दीपन मानकर अनेक कल्पनाएँ की गयी हैं।

निष्कर्ष

[22] विक्रमोर्वशीयम् 1/10

उपर्युक्त विवेचना से स्पष्ट होता है कि कवि की कृतियों में कल्पना व यथार्थ में समन्वय सरस रूप से एवं सहजता के साथ है। कवि ने उतनी ही कल्पना का आश्रय लिया है। जो काव्य के उत्कर्ष व व्यंजनात्मका (रस ध्वनि) के लिए अपरिहार्य हो क्योंकि रसाधान के लिए कल्पना आवश्यक है। तथापि कवि का वर्ण्य विषय सर्वग्राह्य है नितान्त भ्रामक नहीं। जो मानव जीवन में घटित होता है, उन्हीं बातों का कवि ने विस्तार किया है।